संगीत प्रेमी पाठकों को नमस्कार |

इस बार आपसे मिलने में विलम्ब हो रहा है, क्यों कि मैं डेंग्यू से बीमार हो गई थी; अब स्वस्थ हो रही हूँ| बीमारी के दौरान मिलने आई एक छात्रा ने पूछा था - मैं अब सीखती नहीं हूँ, केवल सुनती हूँ| अत: मुझे आपसे यह पूछना है कि शास्त्र को न समझते हुए भी तो संगीत का आनंद लिया जा सकता है,फिर शास्त्र की अहमियत क्या है? उसे तो मैंने उत्तर दे दिया और उसको संतोष भी हुआ, किन्तु मैंने सोचा कि इस बार मंथन के लिए यही विषय क्यों न चुना जाय ! अत: अब हम विचार करेंगे कि कला और शास्त्र का आपस में क्या सम्बन्ध है|

कला प्रस्तुत करते समय हम भावनाओं को प्रकट करते हैं, यह प्रस्तुति संयमित होती है और नियमों में बंधी रहती है| अर्थात सुंदरता पूर्वक, नियम बद्ध किया गया प्रस्तुतिकरण होता है - कला | नियम ही शास्त्र हैं| अत: बिना शास्त्र के कला की पेशकारी असम्भव है| जैसे कि आसमान से गिरा हुआ पानी बह जाता है, किन्तु उसके दोनों ओर तट बने हों तो वह पानी अनुशासन पूर्वक बहता है| उसका संचय करके उस से बहुत से उपयोगी कार्य किये जा सकते हैं| हम जब बिना शास्त्रीय जानकारी के संगीत सुनते हैं तो कानों को मीठा अवश्य लगता है, किन्तु शास्त्र पता होने से आनंद में समझदारी की मात्रा बढ़ जाती है| जब हम शास्त्रीय संगीत की महफिल में श्रोता के रूप में उपस्थित होते हैं और हमें कम से कम १५-२० रागों की जानकारी होती है, तब गायक अथवा वादक यदि ऐसा राग पेश करता है, जो हमे आता हो तो सुनते समय अपने आप हमारा ध्यान राग की प्रस्तुति की बारीकियों की ओर रहता है| हमें उस राग का जो रूप पता होता है उससे यदि कलाकार कुछ अलग ढंग से उसे प्रस्तुत करे तो हम बाद में घर आकर पुस्तक में देखते हैं ,यदि फिर भी समझ में नहीं आए तो गुरुजनों से पूछते हैं| इस प्रकार से चिंतन शुरू हो जाता है और उचित जानकारी मिलने पर जब दुबारा उस राग का वैसा ही रूप सुनने को मिले तो हम अधिक आनंद प्राप्त करते हैं|

अब इस मुकाम पर हमें इस बात का ज्ञान होता है कि यदि शास्त्र न हो तो कला भी नहीं होगी; हाँ ,लोक संगीत के लिए शास्त्र की जानकारी न हो तो चल सकता है| किन्तु जब लोक संगीत की धुनों को शास्त्रीय संगीत में परिवर्तित किया जाता है, तब बगैर शास्त्र जाने ऐसा करना सम्भव नहीं होता| कोई हमसे पूछे कि फलाँ घराने के लोग कोई विशिष्ट राग अलग ढंग से गाते हैं,तब यदि हमें इस बात की जानकारी नहीं हो, तो हमें कुछ पुस्तकें देखकर, हमारे गुरुजनों से पूछकर यह बात जान लेनी चाहिए और जिस व्यक्ति ने यह

जानकारी लेनी चाही थी उन्हें दे देनी चाहिए| किन्तु इतना सब जानने लायक यदि हमारा ज्ञान न हो, तो उस आनंद से भी हम वंचित रह जायेंगे |

कला के लिए शास्त्र का एक और भी लाभ कहा जा सकता है| कला समय के साथ बदलती रहती है, पश्चात उसका शास्त्र भी तैयार होता जाता है| यदि शास्त्र नहीं हो तो कला के विभिन्न परिवर्तनों का लेखाजोखा नही रखा जाएगा और समय के साथ ध्रुपद, ख्याल जैसी गीत विधाओं की जानकारी भी मिट जाएगी | आज सबसे नई विधा है फ्यूजन संगीत, यदि इसका शास्त्र नहीं बना और इसके विषय में कहीं अंकन नहीं हुआ तो क्या आप समझते हैं कि ५०-७५ साल के बाद किसी को फ्यूजन का मूल स्वरूप याद होगा?

शास्त्र का एक महत्त्वपूर्ण उपयोग है-उसका अनुसंधान के लिए योगदान| देखिये-प्राचीन संगीत का कोई अंकन,टेप रिकार्डिंग आदि न होने से उसका स्वरूप अनुमान से ही जानना होता है| आज ध्रुपद, ख्याल, ठुमरी, गजल आदि गीत विधाओं की प्रचुर जानकारी शास्त्र में निहित है जो पुस्तकों, ध्वनिमुद्रण आदि के रूप में संग्रहित है| आगे की पीढियाँ उस विषय में अनुसंधान करना चाहें तो कर सकेंगी|

कला उत्स्फूर्त होती है, कुछ समय बाद विचार बढता है और कुछ रागों में संशोधन भी होता है| मैं एक उदाहरण यहाँ देना चाहूँगी जो मैंने अपने बुजुर्गो से सुना है| पं.जगन्नाथबुवा पुरोहित ने एक नया राग निर्माण किया - जोगकौंस, आज वह जिस रूप में गाया जाता है उसका पूर्व रूप कुछ भिन्न था - उसमें रिषभ लगता था| किन्तु पं. पुरोहित ने बाद में उसमें संशोधन किया और आज जिस रूप में वह गाया जाता है वह रूप उसे दिया| यह बात क्यों हुई? क्यों कि बुवा ने उसपर चिंतन मनन किया, उसका जो लिखित रूप था उसमें उन्हें कुछ आकर्षकता की कमी महसूस हुई होगी अथवा शास्त्र की दृष्टि से यह, आज प्रचलित रूप अधिक उचित लगा होगा| तात्पर्य यह है कि कला उत्स्फूर्त होती है, किन्तु उसके शास्त्र में तब्दील होते होते कुछ बदलाव भी हो जाते हैं| अत: हम कह सकते हैं कि कला एवं शास्त्र एक दूसरे पर अवलम्बित हैं, उनका चोली - दामन का साथ है| कला से शास्त्र को अथवा शास्त्र से कला को अलग करना उचित नहीं है|

अब विदा लेती हूँ, आगे किसी नए विषय के साथ उपस्थित होऊँगी | नमस्कार !

Namaskaar Sangeet lovers and all readers!

It has been a while since we last met, as I was down with Dengue Fever. Now feeling much better. During the illness, one student who came to visit me asked a question that "Is it necessary to learn music theory when just by listening to music you can attain the enjoyment?" I answered her question and she was satisfied. However, I thought why not talk on this subject for 'Sangeet Manthan' this time ? Therefore, we will think about how art and science are related to each other.

During the performance of music we express our emotions. This performance is bound by rules and regulations. In other words, it is the performance with beauty which is also bound by rules - the rules is the science or theory. Hence, performing the art without the knowledge of theory is just impossible. For example, when it rains, the water falls on the ground, but if this water is controlled by walls on both sides, it flows well with discipline. This collected water becomes useful for various purposes. In the same manner, when we listen to music without any theoretical knowledge, it surely sounds pleasant to the ears, but when listened with the understanding of knowledge sounds more enchanting. When we attend a musical performance as a listener having a knowledge of minimum 15 to 20 raags, then if the performer performs one of those raags that we have learnt, our attention goes to the minute details of that raag and we enjoy it more. If the artist performs certain variations in that raag other than that we have learnt, our curiosity leads us to research more through books or through our Gurus. This is how the thought process begins and when we finally get the appropriate information , listening to the same music twice, we achieve a better fulfillment (we enjoy the raag more and more).

Now with this understanding, we come to the conclusion that art is not complete without the theoretical knowledge . Yes, for folk music, if you do not have theoretical knowledge, it works! But, it is impossible to change a dhun of folk music to a classical dhun without having theoretical knowledge of it. If somebody asks a question to us that certain ghrana singers perform a specific raag in a particular style, then if we don't have information about the gharaana, we have to refer a book or consult our

Gurus for the information and pass on that information to the person who is willing to know about it. However, if we are not knowledgeable enough, we are deprived of that pleasure.

For the art, there is one more benefit of knowledge. Art changes with time and accordingly its theory update is followed. If there is no theory or science, the write-up of different variations of the art cannot be maintained and with time, the knowledge about all the varieties such as Dhrupad, Khyaal will slowly fade away. Today, the latest style of music is fusion music. Do you think anybody will remember its original form after 50 to 75 years, if it has no theory or marking (written material)available ? There is an important use of theory or science which is one's contribution for its preservation. Let's look this way. Because of absence of marking, tape recording etc. of the ancient music, its form is understood with only presumption. Today, in order to preserve these fine arts like Dhrupad, Khyaal, Thumari, Gajal etc., (many painstaking efforts are taken by many writers and Gurus), a lot of information of these is treasured in the form of recordings, books etc. The future generation who would like to do the research in consequent subjects, they can do so with this treasure of knowledge. An art is spontaneous. After certain time, thought process is progressed and research is done on some raags. I would like to give an example which I gathered from my elders. Pt. Jagganathbuva Purohit designed a new raag – Raag Jogkauns. The form of this raag which is performed in front of us today is different than its original form. Rishabh swar was present in that form but Pt. Purohitji did research on it and gave it new face and that's how it is sung today. Why did this happen ? Because Buva did lot of speculation (thinking) on it. Accordingly, there might be a lack of attractiveness in the written form or according to ethological (disciplinary) view, today's form might be much better or more appreciable. The conclusion is that art is inspiring, but while transforming into or adapting to theory or knowledge , some modifications also take place. Therefore, we can state that art and knowledge go hand in hand. Both are interdependent. Like CHOLI and DAMAN, we cannot separate one from the other.

Now with this, I take a leave.....Next time, I will return with a new topic. Namaskaar !!!